डॉ. गुप्त से मिलने की गरमाहट से मन में कुछ अजीब उठापटक चल रही थी। जब अरुण बज़ाज़ ने दरवाज़े की घंटी बजाई तो डॉ. गुप्त खुद गेट खोलने आए उन्हें देखते ही मैंने दोनों हाथ जोड़कर उन्हें नमस्ते कहा और उन्होंने हमें भीतर ले जाकर ड्राइंग रूम में बिठाया और कहा- मैं आया अरुण जी। कोई पाँच मिनट के अंदर ही डॉ. गुप्त के सामने मैं और अरुण बैठे थे। मेरे मन में तब अजीब सा कौतूहल चल रहा था कि बात कहाँ से शुरू की जाए, तभी अरुण ने कहा- डॉ. साहब कल्याण आजकल अच्छी कविताएं लिख रहा है और युहिले का काम भी बड़ी ईमानदारी से कर रहा है। डॉ. गुप्त ने मेरी ओर देखा और कहने लगे, अरुण जी यह तो अच्छी बात है, किसी संस्था को चलाने के लिए ऐसे युवाओं को सामने आना चाहिए। कल्याण अगर आपको बुरा न लगे तो एक बात पूछूं। मैंने कहा जी- डॉ साहब। कल्याण मुझे आपके नाम के बारे में आपसे कुछ पूछना है, तो मैंने कहा पूछिये डॉ. साहब। डॉ साहब ने कहा, कल्याण, तुम तो मुस्लिम हो, शेख मोहम्मद कल्याण, फिर कल्याण क्या तुमने तखल्लुस रखा हुआ है ? मैंने कहा नहीं, डॉ. साहब तखल्लुस नहीं, कल्याण हमारी सब कास्ट है। डॉ साहब ने फिर पूछा, कहाँ रहते हो? क्या करते हो? बातों के सिलसिले को यूं ही बढ़ाए रखा था डॉ. साहब ने। तब तक बारिश तेज़ हो चुकी थी, डॉ. गुप्त की पत्नी जिन्हें हम आंटी कहकर बुलाते थे, ने गरम गरम चाय के साथ गरम गरम पकोड़े भी टेबुल पर रख दिए थे, चाय की चुस्कियों संग हमारे बीच की सारी झिझक बारिश के पानी में बह चली थी। डॉ. गुप्त जैसी महान हस्ती मेरे सामने बैठी थी और मैं एक छोटा सा लेखक ... खैर, चाय ख़त्म होते तक बारिश भी बंद हो चुकी थी और हमने डॉ. गुप्त से इजाज़त ली और जैसे ही गेट से बाहर निकले डॉ. गुप्त ने विशेष रूप से मुझे कहा- कल्याण, फिर कभी आना , जी सर, ज़रूर और हमने स्कूटर स्टार्ट किया और निकल पड़े अपने-अपने घर की ओर, पर मन में जैसे बसंत के तमाम फूल आज ही खिल उठे थे। फिर तो डॉ. गुप्त के घर आने जाने का सिलसिला नियमित चल पड़ा था, और डॉ. गुप्त के संबंध मुझसे और गहरे होते चले गए। युवा हिन्दी लेखक संघ को लेकर अक्सर डॉ. गुप्त मुझसे चर्चा करते रहते। इस बीच मैं युवा हिन्दी लेखक संघ का अध्यक्ष हो गया था। 2015 की बात है, हमने युहिले की ओर से दो दिवसीय संगोष्ठी का आयोजन रखा, जिसमें मुझे लगा कि एक पूरा सत्र डॉ. गुप्त के समग्र लेखन पर ही केन्द्रित किया जाए और हमने किया भी, पर उस सत्र में डॉ. गुप्त नहीं आ सके क्योंकि उन दिनों उनकी सेहत ठीक नहीं चल रही थी । तब पंजाब की साहित्यकार डॉ. कीर्ति केसर और डॉ. रजनी ने डॉ. गुप्त के लेखन पर अपने अपने पत्र प्रस्तुत किए। वो दोनों पत्र हमने युहिले पत्रिका में प्रकाशित भी किए थे। मैं अक्सर डॉ. गुप्त से मिलने उनके घर जाया करता हमारे बीच साहित्यिक गैर साहित्यिक बातें होतीं। बातों ही बातों में कई बार जम्मू के साहित्य पर चर्चा करते-करते वह गंभीर हो जाते और याद करते अपने पुराने दिनों को कि कैसे और किन हालातों में उन्होंने युवा हिन्दी लेखक संघ की नींव रखी, कौन कौन लोग उस समय साथ थे, जिनमें से बहुत तो अब इस दुनिया में नहीं हैं, अपनी मृत्यु से कुछ दिन पहले ही उन्होंने युवा हिन्दी लेखक संघ को फिर उसी उच्च स्थान पर ले जाने का संकल्प लिया। और इसी सिलसिले में हमारे बीच बहुत गंभीर बातें होतीं और हमारे बीच केंद्र बिन्दु हमेशा जम्मू का साहित्य होता और डॉ. गुप्त नए लेखकों को सुनकर हमेशा ही संतुष्ट होते और कहते कि जम्मू के नए लेखक मुख्य धारा से कहीं भी कम नहीं हैं चाहे कविता की बात हो या कहानी की। और इन छह माह में उन्होंने फ़ेसबुक पर भी अपने आपको सक्रिय कर लिया था। हमारी घंटों आपस में 'चैट' होती और मुख्य बात कविता को लेकर ही होती। वह इस बात से बहुत संतुष्ट थे कि जम्मू में जो नए लेखक इन दिनों हिन्दी कविता लिख रहे हैं उस कविता को किसी भी तरह से कम नहीं आँका जा सकता। अक्सर ऐसी चर्चा हमारी बातों में रहती।

एक अरसे के बाद डॉ. गुप्त युहिले की हर गोष्ठी में, बाकायदा, बिना नागा आने लगे थे । मुझे याद है, एक दिन डॉ. गुप्त ने मुझे घर पर बुलाया। वैसे तो हम जाते ही रहते थे पर उस दिन डॉ. साहब ने मुझे ज़ोर देकर कहा कि कल्याण, ऑफिस से घर जाते हुए मुझसे मिलकर जाना। मुझे अच्छा लगा, मैंने सोचा कि शायद डॉ. साहब को कोई नई योजना बनानी होगी युहिले के अगले कार्यक्रम की, और मैं दोपहर लगभग ढाई बजे उनके घर पहुँच गया। बातों-बातों में उन्होंने अपने नये काव्य संग्रह तोषी तथा कुछ अन्य कविताएं पर कुछ लिखकर मुझे देते हुए, कहा, कल्याण, यह प्रति तुम्हारे लिए। मैंने उन्हें धन्यवाद कहा और उनसे विदा लेकर घर आ गया। घर पर खाना खाने के बाद मैंने पुस्तक खोली तो मैं हैरान रह गया, डॉ. साहब ने लिखा था कि युहिले के कल्याण के लिए, मैं स्तब्ध, कि डॉ. साहब ने मुझे युहिले से किस तरह जोड़ दिया जैसे संस्था का सारा दारोमदार मुझी पर हो। जबकि सभी जानते हैं कि संस्था किसी भी एक आदमी की नहीं होती बहुत से साहित्यकार जब मिलकर बैठते हैं तब संस्था बनती है । दूसरा झटका मुझे तब लगा जब मैंने डॉ. साहब का लिखा आत्मनिवेदन पढ़ा , जिसमें डॉ साहब ने मेरा हवाला देते हुए लिखा था कि आपकी कोई नई पुस्तक आ रही है ? कल्याण ने सहज भाव से ही पूछ लिया था। मन में कांटा सा अड़ गया। साहित्य संगम पब्लिकेशन्स के सुदेश महाजन से बात की तो उन्होंने पूरा मैत्री भाव उड़ेलते हुए कहा- पुस्तक ले आइये । सो बन गई यह पुस्तक तोषी तथा अन्य कविताएं । ऐसी थी डॉ. गुप्त की शख्सियत। उनका यूं चले जाना हमारे लिए तो नुकसानदेह है ही पर हमारे साथ जम्मू के पूरे साहित्य परिवेश की जो क्षति हुई है। ऐसी क्षति कि जिसकी भरपाई हो ही नहीं सकती। ■